आध्यात्मिक सशक्तिकरण

संदेश

आज सारे विश्व में अशान्ति है। जिन मनुष्यों के पास धन है, साधन हैं, वे भी सच्ची शान्ति से वन्चित हैं। निर्धन हों या धनवान सभी अपनी-अपनी रीति से परेशान हैं। स्थाई सुख-शान्ति की तलाश सभी को है। शान्ति के लिए हर प्रकार के प्रयास एवं प्रयत्न होते रहे हैं। राजनैतिक सशक्तिकरण, आर्थिक सशक्तिकरण, शिक्षा एवं विज्ञान द्वारा सशक्तिकरण, महिलाओं का सशक्तिकरण आदि अनेकों कोशिशों के बावजूद हिंसा, अपराध, अन्याय घटे नहीं, वरना बढ़े ही हैं।

देखा जाय तो इन सबका कारण पाँच मनोविकारों द्वारा उत्पन्न हुआ नैतिक पतन ही है। ये मनोविकार हैं– काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार। इनकी उत्पत्ति आंतरिक शक्ति की कमी अथवा आध्यात्मिक कमजोरी से होती है। अतः आज मानव समाज को आवश्यकता है, आध्यात्मिक सशक्तिकरण की।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण का अर्थ है अपने अन्दर के विकारों का उन्मूलन करना और आत्मा को अपने आदि-अनादि गुणों एवं शक्तियों में वापस ले जाना। जब तक मनुष्य नहीं बदलेगा तब तक समाज भी नहीं बदल सकता। समाज को परिवर्तन करने के लिये मनुष्य को पहले अपने स्वयं के विचारों को बदलना होगा।

कई लोग आध्यात्मिकता और धर्म में अन्तर को नहीं जानते। आध्यात्मिकता का अर्थ है आत्मा के मौलिक गुणों शान्ति, प्रेम, आनंद, पवित्रता और शक्ति को बढ़ाना तथा सर्व को एक परमपिता परमात्मा की सन्तान भाई-भाई समझना।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण के बिना स्वर्ग या रामराज्य केवल कल्पना ही है, उसे वास्तविकता में परिणित नहीं किया जा सकता। आध्यात्मिकता द्वारा ही मानवीय मूल्यों का पुनर्वास होगा, जिससे ही स्वर्णिम दुनिया की पुनर्स्थापना होगी। प्रस्तुत चित्र प्रदर्शनी इन्हीं तथ्यों का साक्षात्कार कराती है।

मुझे अपार प्रसन्नता है कि इस प्रदर्शनी द्वारा मानव को जीवन में आध्यात्मिक शक्तियों को अपनाने की प्रेरणा मिलेगी, जिससे वह गुणवान बनकर स्वर्ग सम सुख-शान्तिमय जीवन व्यतीत कर सकता है।

दादी प्रकाशमणि

विषय सूची

क्रम संख्या		पृष्ठ संख्या
1	आध्यात्मिक सशक्तिकरण द्वारा स्वर्णिम युग में प्रवेश	2
2	आध्यात्मिक सशक्तिकरण का आधार - स्मृति	5
3	आध्यात्मिक सशक्तिकरण – स्वर्णिम युग की चाबी	6
4	आध्यात्मिक सशक्तिकरण – आन्तरिक व बाह्य	9
5	आज का आध्यात्मिक सशक्तिकरण – कल की राज्य व्यवस्था का आधार	10
6	जीवन में सोलह कलाओं द्वारा देव पद की प्राप्ति	13
7	आध्यात्मिक सशक्तिकरण की प्रयोगशालाएं	16
8	आध्यात्मिक सशक्तिकरण और परिवर्तन चक्र	19
9	धरती पर स्वर्ग	20
10	प्रकृति और मानव प्रकृति में सुसंवादिता	23
11	मुख पृष्ठ से सम्बन्धित	24

आध्यात्मिक सशक्तिकरण द्वारा स्वर्णिम युग में प्रवेश
Entering Golden Age Through Spiritual Empowerment

स्वर्णिम युग एक ऐसा समय था जब कि विश्व में सम्पूर्ण सुख शान्ति का साम्राज्य था और यह सृष्टि फूलों का बगीचा कहलाती थी। प्रकृति भी सतोप्रधान थी और किसी प्रकार की भी प्राकृतिक आपदाएं नहीं थीं। सभी मनुष्य सतोप्रधान एवं दैवी गुण सम्पन्न थे और आनन्द व खुशी से जीवन व्यतीत करते थे। उस समय यह संसार स्वर्ग कहलाता था जिसे सतयुग भी कहते हैं। उस विश्व में समृद्धि, सुख और शान्ति का मुख्य कारण था कि उस समय के राजा तथा प्रजा सभी पवित्र और श्रेष्ठाचारी थे।

उस स्वर्णिम संसार की तुलना में आज का मनुष्य विकारी, दुखी व अशान्त बन गया है तथा यह संसार रौरव नर्क हो गया है। इस कलयुगी संसार से निकल उस स्वर्णिम सतयुगी संसार में जाने की इच्छा भला किसे नहीं होगी? सभी मनुष्य मात्र पुकारते भी हैं कि हे प्रभु, हमें दुख और अशान्ति से छुड़ाओ तथा हमें मुक्ति-धाम और स्वर्ग में ले चलो। उस स्वर्ग, सतयुग अथवा स्वर्णिम युग में जाने का उपाय है- 'आध्यात्मिक सशक्तिकरण'। चित्र में कुछ पथ (रास्ते) दिखाये गये हैं जो स्वर्णिम युग के प्रवेश द्वार की ओर ले जाते हैं। एक पथ पर हवा में उड़ने वाला (पंख सहित) घोड़ा दिखाया गया है जो कि 'मन' का प्रतीक है। मन के अन्दर अनेकानेक संकल्प उत्पन्न होते हैं, जिनकी गति भी बहुत तेज होती है। इन संकल्पों को 'बुद्धि' के द्वारा नियंत्रण में किया जाता है। साधारणतः यह मन मनुष्य को बहुत परेशान करता है। अतः यदि मन व बुद्धि का दिव्यीकरण किया जा सके तथा आध्यात्मिक ज्ञान के आधार पर इन्हें सही दिशा प्रदान की जाये तो यह शक्तिशाली बनकर मनुष्य को स्वर्णिम युग की ओर ले जाते हैं। दूसरे पथ पर काँच का एक गिलास दिखाया गया है जो आधा भरा है तथा इस भरे हुए भाग में एक प्रसन्नचित चेहरा है, जो सकारात्मक चिन्तन (Positive - Thinking) का प्रतीक है। ऐसा व्यक्ति जीवन की उपलब्धियों को देख-देख सदा खुश होता है। नकारात्मक चिन्तन वाला व्यक्ति गिलास के उस खाली भाग के समान है जो जीवन में अप्राप्तियों को देख सदा दुखी रहता है।

इसी प्रकार राजयोग (Meditation) के अभ्यास से मनुष्यात्मा का सम्बन्ध सर्वशक्तिवान पतित पावन, पारलौकिक परमपिता परमात्मा 'शिव' के साथ जुड़ता है जिससे उसे विकारों पर विजय प्राप्त करने का मनोबल प्राप्त होता है। विकर्म विनाश होने के कारण वह हल्के पन का अनुभव करता है। इसी प्रकार दिव्य गुणों की धारणा से मनुष्य सूर्य मुखी फूल के समान सदा हर्षित रहता है, क्योंकि उसका मुख (बुद्धियोग) सदा सूर्य (ज्ञान सूर्य परमात्मा) की तरफ होता है। जीवन में मानवीय मूल्यों- प्रेम, संतोष, गम्भीरता, विनम्रता, सहनशीलता आदि की धारणा तथा आदरयुक्त दिव्य व्यवहार ही मनुष्य को सर्व का प्रिय बनाता है। इस प्रकार उपरोक्त तथा अन्य साधनों द्वारा व्यक्ति अपना आध्यात्मिक सशक्तिकरण कर सकता है तथा नये स्वर्णिम युग में जाने का अपना ईश्वरीय जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त कर सकता है।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण द्वारा स्वर्णिम युग में प्रवेश

सकारात्मक चिन्तन, योगाभ्यास, गुणों की धारणा और दिव्य व्यवहार।
ये रास्ते ले जाते वहाँ, जहाँ स्वर्णिम युग का द्वार॥

आध्यात्मिक सशक्तिकरण का आधार - स्मृति

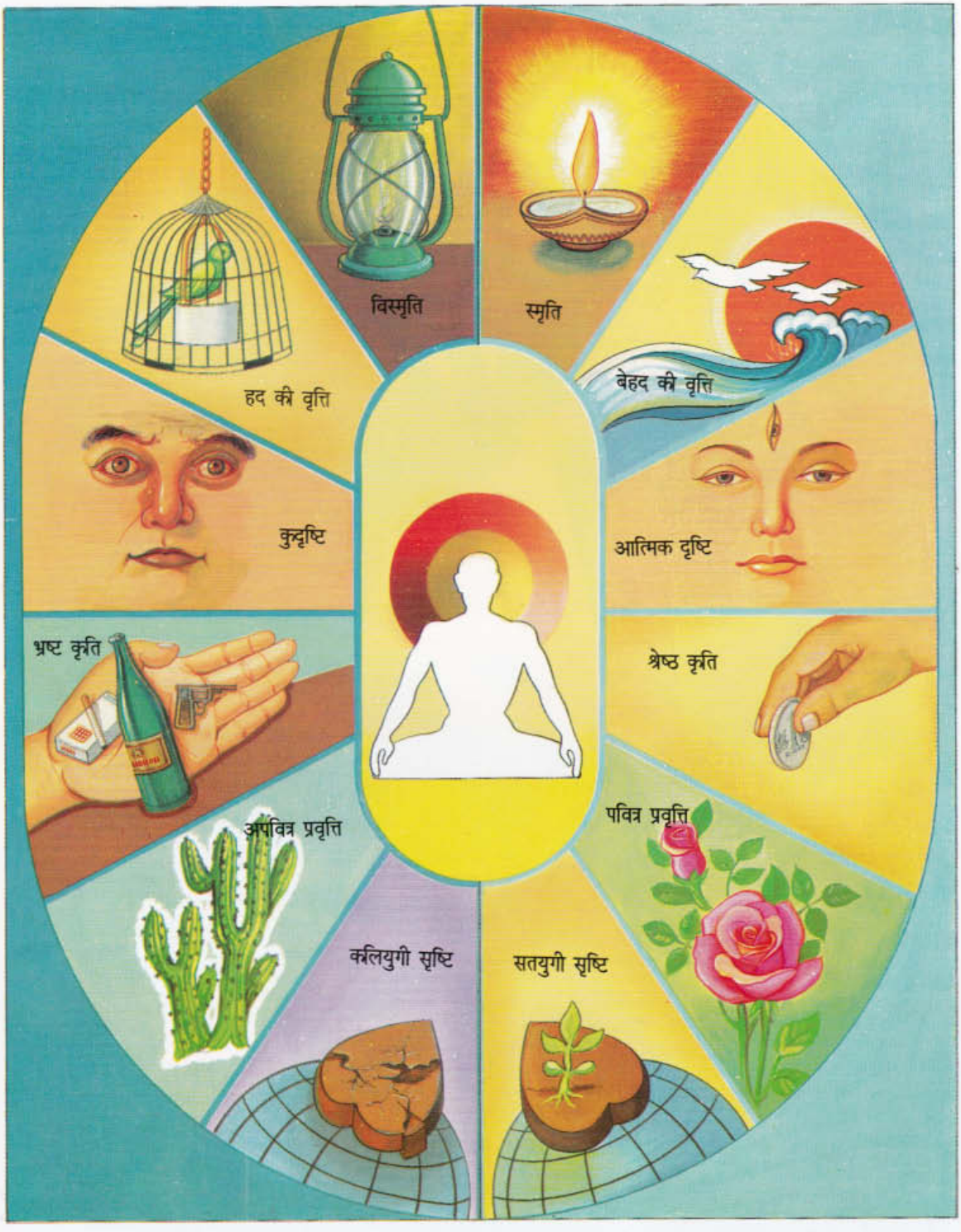

स्मृति से बदली वृत्ति-दृष्टि-कृति-प्रवृत्ति, बदली सृष्टि सारी।
आओ स्मृति का परिवर्तन कर, बनाएँ एक दुनिया प्यारी॥

आध्यात्मिक सशक्तिकरण का आधार - स्मृति

Foundation of Spiritual Empowerment - Consciousness

कहा जाता है कि जैसा मनुष्य सोचता है, वैसा ही वह बन जाता है, अर्थात् उसी अनुरूप उसे प्राप्ति होती है। यदि मनुष्य का संकल्प और स्मृति शक्तिशाली है तो उसके अनुरूप ही उसे सुखदाई फल की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत यदि उसकी स्मृति कमजोर है अर्थात् विस्मृति का रूप लिये है तो वह जीवन में दुख व अशान्ति की अनुभूति करता है। इसलिए ही कहा गया है कि जैसी स्मृति वैसी वृत्ति और उसके अनुरूप ही दृष्टि, कृति, प्रवृत्ति और सृष्टि बनती है।

आज साधारणतः मनुष्य की स्मृति में देह और देह से सम्बन्धित व्यक्ति, पदार्थ व वैभव होते हैं। यह सब विनाशी हैं तथा अज्ञान अन्धकार के कारण हैं व ज्ञान प्रकाश से विस्मृत हैं, इस कारण मनुष्य की वृत्ति भी हद की हो जाती है और वह बहुत ही संकुचित दायरे के अन्दर सोचता व व्यवहार करता है। इस हद की वृत्ति को पिंजरे के पक्षी के रूप में दिखाया गया है। दैहिक वृत्ति के कारण वह कुदृष्टि अर्थात् विकारी दृष्टि से ही देखता है और इस कारण से उसके कर्म भी भ्रष्ट हो जाते हैं और उसकी प्रवृत्ति भी कांटो जैसी अर्थात् दुखदायी बन जाती है। जब संसार में चारों ओर ऐसे ही मनुष्य हो जाते हैं और चहुँ ओर कलह-क्लेष व्याप्त हो जाते हैं तब यह सृष्टि ही कलहयुगी (कलयुगी) बन जाती है। इस दुनिया में न तो सम्बन्धों में मधुरता ही होती है और न ही जीवन में सुख व शान्ति। स्वार्थ, कटुता, संशय, ईर्ष्या, अहंकार आदि की दरारें सभी के दिलों में पड़ जाती हैं। विस्मृति से कलयुगी सृष्टि तक के यह छः पहलू चित्र के बाएँ भाग में लालटेन से लेकर नीचे तक दर्शाये गये हैं। ऐसी सृष्टि को सतयुगी सृष्टि बनाने की विधि है आज के मानव का आध्यात्मिक सशक्तिकरण करना। इसका आधार है राजयोग का प्रशिक्षण जिससे मनुष्यों की स्मृति स्वतः ही शक्तिशाली बनती जाती है। आत्मा रूपी दीपक में ज्ञान रूपी बाती तथा योग रूपी घृत से स्मृति प्रकाशवान बनती है और इसका तेज चारों ओर फैलता है। फलस्वरूप उसकी वृत्ति आकाश में विहार करते पक्षी के समान बेहद की बन जाती है और वह विश्व के कल्याण के लिए सोचता व व्यवहार करता है। इस बेहद की वृत्ति के कारण उसकी दृष्टि में भी आत्मीयता आ जाती है और वह किसी को भी देह के रूप में न देखकर उसे भृकुटि में स्थित शुद्ध आत्मा के रूप में देखता है। फलस्वरूप उसके कर्म भी श्रेष्ठ बन जाते हैं और मन वचन के साथ-साथ वह धन का भी सम्पूर्ण सदुपयोग करता है। इस कारण उसका जीवन व सम्पूर्ण प्रवृत्ति ही खुशबूदार फूल समान सुखदायी बन जाती है। जब संसार में चारों ओर ऐसी प्रवृत्ति होती है तब वहाँ सत्य ही सत्य होता है जिससे उसे सतयुगी सृष्टि कहते हैं। वहाँ प्रत्येक के हृदय में सुख, शान्ति, आनन्द, पवित्रता, प्रेम, सहिष्णुता रूपी गुणों के हरे-भरे पौधे लहराते रहते हैं। वर्तमान समय मानव मात्र की स्मृति को पवित्र व शक्तिशाली बनाकर उसके आध्यात्मिक सशक्तिकरण का यह महान कार्य स्वयं परमपिता परमात्मा शिव, प्रजापिता ब्रह्मा एवं उनकी मुखसंतान ब्रह्माकुमार व ब्रह्माकुमारियों द्वारा करा रहे हैं।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण – स्वर्णिम युग की चाबी

Spiritual Empowerment — The key of Golden Age

स्वर्णिम युग में प्रवेश करने की अथवा उसका द्वार खोलने की अद्भुत कुँजी है- जीवन में ईश्वरीय ज्ञान, सहज राज़योग, दिव्य गुणों की धारणा करना और ईश्वरीय सेवा को अपनाना। यह दिव्य और अलौकिक कार्य केवल एक निराकार परमपिता परमात्मा ज्योतिर्बिन्दु 'शिव' का ही है जो कि सर्व मनुष्यात्माओं के परम शिक्षक और परम सद्गुरू भी हैं। इस कार्य का प्रारम्भ सन् 1937 में निराकार शिव परमात्मा ने साकार प्रजापिता ब्रह्मा में प्रवेश कर उन के द्वारा किया तथा इसके लिए परमात्मा शिव ने मुख्यतः पवित्र कुमारियों व माताओं तथा कुछ भाईयों की एक अहिंसक शिवशक्ति-पांडव सेना तैयार की, जिन्होंने ज्ञान, योग, सेवा व दिव्य गुणों की धारणा कर अपने मनोविकारों पर विजय प्राप्त करने का विशेष गुप्त पुरुषार्थ किया। यह कार्य अभी भी तीव्र गति से चल रहा है तथा नित्य प्रति अनेकानेक मनुष्यात्माएं इस सेना में जुड़ती चली जा रही हैं। अब निराकार परमपिता परमात्मा शिव व अव्यक्त वतन वासी ब्रह्मा निकट भविष्य में आने वाले स्वर्णिम युग की कुँजी इस सेना को दे रहे हैं।

जैसा कि पहले बताया गया है- ईश्वरीय ज्ञान, सहज राजयोग, दिव्य गुणों की धारणा व ईश्वरीय सेवा ही स्वर्णिम युग का द्वार खोलने की कुँजी है। इन चारों को चित्र के नीचे के भाग में दिखाया गया है। ईश्वरीय ज्ञान के कुछ मुख्य पहलू हैं- आत्मा, परमात्मा व सृष्टि चक्र का सत्य ज्ञान, जो स्वयं परमात्मा ही बताते हैं। उन्होंने स्वयं अपना परिचय दिया है कि "मेरा नाम शिव है", मैं परमधाम का रहवासी हूँ, मेरा रूप ज्योतिर्बिन्दु है और मैं शान्ति, प्रेम, व आनन्द का सागर हूँ। मैं ही पतित पावन, जन्म मरण रहित व दिव्य दृष्टि विधाता और मुक्ति-जीवनमुक्ति का दाता भी हूँ... तुम आत्माएं भी मेरी तरह ज्योतिर्बिन्दु स्वरूप हो तथा शान्ति, आनन्द, प्रेम, पवित्रता व ज्ञान स्वरूप हो। तुम आत्माएं मन, बुद्धि व संस्कारमय हो तथा मस्तक में भृकुटि के मध्य में रहती हो...यह मनुष्य सृष्टि चक्र एक अनादि अविनाशी खेल है जो हर पाँच हजार वर्ष के बाद हूबहू पुनरावृत्त होता रहता है। इस सृष्टि चक्र में चार युग- सतयुग, त्रेता, द्वापर व कलियुग होते हैं। प्रत्येक की आयु 1250 वर्ष होती है।

सहज राजयोग अर्थात् आत्मा को अपने पारलौकिक पिता की स्वतः और सहज याद। ज्ञान का मनन चिन्तन करते हुए मन को ब्रह्मलोक में निराकार परमपिता परमात्मा शिव पर स्थित कर अति प्रेम व घनिष्ट स्नेह से उनकी याद, यह याद ही अशरीरीपन की स्थिति व अतीन्द्रिय सुख का अनुभव कराती है।

जैसे अगरबत्ती की खुशबू वातावरण को तरोताजा व सुगन्धित कर देती है, ऐसे ही योगी व्यक्ति का जीवन सदा अन्य आत्माओं को भी अपने दिव्य गुणों, दिव्य विचारों व दिव्य कर्मों की सुगन्ध से सुगन्धित करता रहता है। विनम्रता, सन्तोष, हर्षितमुखता, गम्भीरता, अन्तर्मुखता, सहनशीलता उसे अपने जीवन में तथा उसके सम्पर्क सम्बन्ध में आने वालों के जीवन में सच्ची सुख शान्ति प्रदान करते हैं।

मन, वचन व कर्म से दूसरों की ईश्वरीय सेवा करने वाला ही स्वर्णिम युग का द्वार खोलने में ईश्वर का सच्चा सहयोगी है। अन्तर्मुखी रह कर मन में सर्व आत्माओं के प्रति शुभ भावना व शुभ कामना रखना, मुख से सदैव मीठे कल्याणकारी, स्नेह युक्त शब्दों का ही उच्चारण करना तथा कर्मेन्द्रियों से निष्काम सेवा करने वाला ही इस पथ पर तीव्र गति से अग्रसर होता है।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण – स्वर्णिम युग की चाबी

ज्ञान, योग, धारणा, सेवा, यह अमूल्य पूँजी है।
जो स्वर्णिम युग का द्वार खोले, यह अद्भुत कुँजी है।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण – आन्तरिक व बाह्य

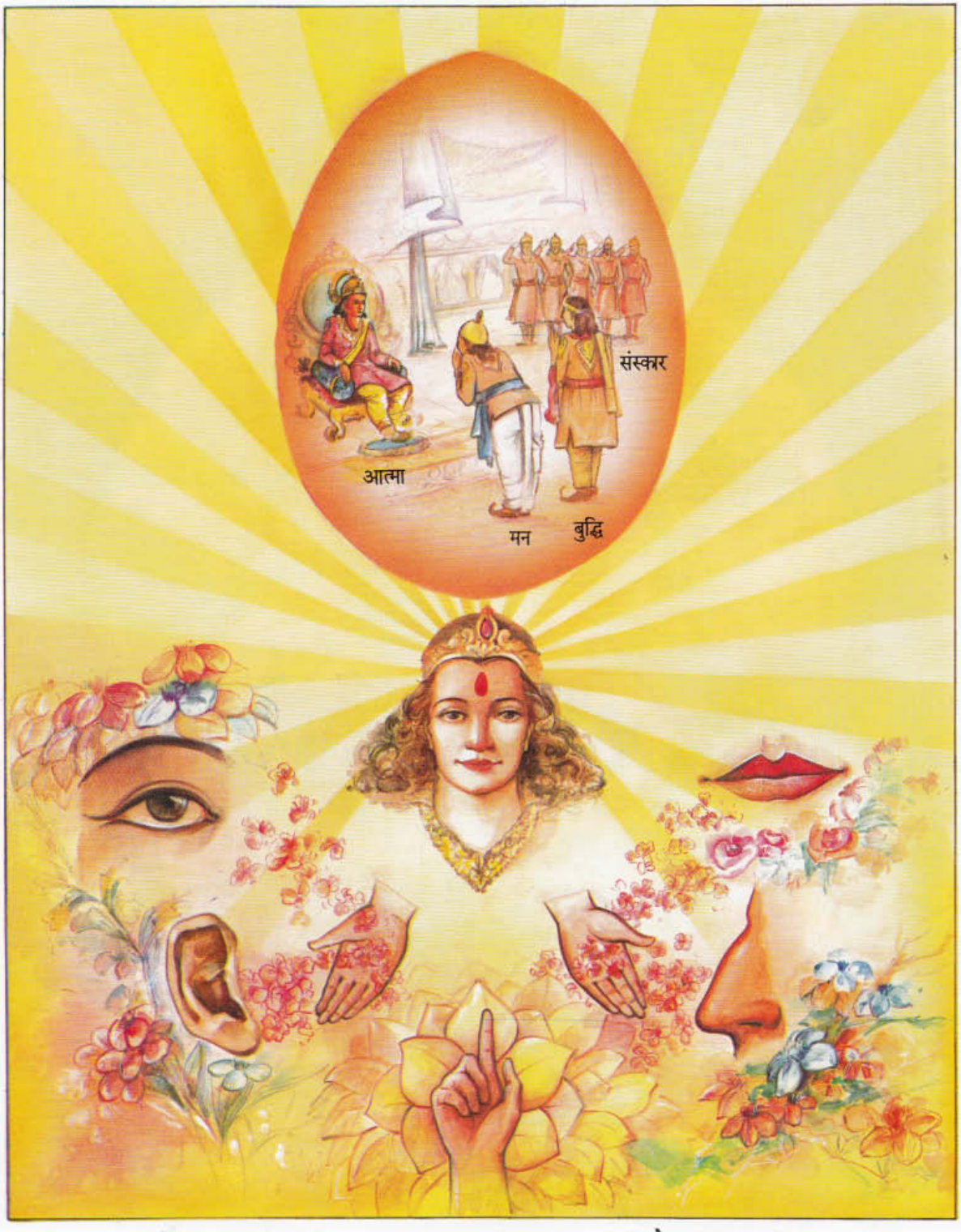

आत्मा राजा की आज्ञा में रहें, जब मन-बुद्धि और संस्कार।
यह आन्तरिक सशक्तिकरण ही, इन्द्रिय वशीकरण का आधार।।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण – आन्तरिक व बाह्य

Spiritual Empowerment — Internal And External

आज यदि किसी मनुष्य से पूछा जाये कि 'आप कौन हो ?' अथवा 'आपका क्या परिचय है ?' तो वह तुरन्त अपने शरीर का नाम अथवा अपना धन्धा आदि बता देगा। पर क्या वास्तव में आप केवल शरीर ही हैं ? मनुष्य (जीवात्मा), आत्मा और शरीर को मिला कर बनता है। जैसे शरीर पाँच तत्वों (जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी और आकाश) से बना हुआ है वैसे ही आत्मा मन, बुद्धि और संस्कारमय है। आत्मा की संकल्प शक्ति का नाम मन है और निर्णय शक्ति का नाम बुद्धि है, तथा वह जैसे कर्म करती है उसी के अनुसार उसके संस्कार बनते हैं। दूसरे शब्दों में आत्मा को यदि राजा कहें तो मन, बुद्धि को उसके अधीन कर्मचारियों की तथा संस्कारों को सैनिक की संज्ञा दी जा सकती है। जब आत्मा राजा के नियंत्रण (Control) में मन, बुद्धि, आदि रहते हैं (जैसा कि सतयुग-त्रेता में होता है) तो यही आध्यात्मिक सशक्तिकरण का आन्तरिक रूप है और तब सभी कार्य सुचारू रूप से चलते रहते हैं। इसके विपरीत जब आत्मा राजा अपनी ही कर्मेन्द्रियों के आकर्षण से प्रभावित कर्मचारियों (मन व बुद्धि आदि) के वशीभूत हो जाता है तब वह (द्वापर व कलियुग में) दुख, अशान्ति व शक्तिहीनता का अनुभव करता है। वर्तमान समय सभी मनुष्य आत्माएं अपने कमजोर व विकारी संकल्पों तथा तमोप्रधान बुद्धि होने के कारण संस्कारों के वशीभूत हो गई हैं और इसी कारण संसार में चारों ओर दुख, अशान्ति व त्राहि-त्राहि मची हुई है। अनेकानेक इच्छाओं के वशीभूत होने के कारण सभी में असंतुष्टता है। अतः आज आवश्यकता है- आत्मा राजा को पुनः शक्तिशाली बनाने के लिये उसके आध्यात्मिक सशक्तिकरण की। यही आन्तरिक सशक्तिकरण है।

आत्मा, शरीर में भृकुटी के मध्य में निवास करती है, जहाँ आत्मा का सम्बन्ध मस्तिष्क से जुड़ा है और मस्तिष्क का सम्बन्ध सारे शरीर में फैले ज्ञान- तन्तुओं से है। आत्मा यहाँ भृकुटी में बैठे ही सारे शरीर और उसकी कर्मेन्द्रियों का संचालन करती है। अतः यदि आत्मा आन्तरिक रीति से शक्तिशाली है तो उसका बाह्य रूप अर्थात् उसके शरीर की कर्मेन्द्रियाँ भी आध्यात्मिक रीति से शक्तिशाली होंगी और आत्मा राजा की आज्ञा के अनुरूप ही कार्य करेंगी। दूसरे शब्दों में आध्यात्मिक सशक्तिकरण के बाह्य रूप से तात्पर्य हुआ शरीर की पाँचों कर्मेन्द्रियों - आँख (दृश्य), कान (श्रवण), नाक (गन्ध), मुँह-जीभ (स्वाद) व हाथ (स्पर्श) - का आत्मा के नियंत्रण में होकर चलना। इसके लिए मन व बुद्धि का सतोप्रधान होकर सकारात्मक सोचना व शीघ्र यथार्थ निर्णय लेना तथा संस्कारों का पावन व कल्याणकारी होना आवश्यक है। जब ये कर्मेन्द्रियाँ आत्मा राजा की इच्छा के अनुसार कार्य करती हैं तो ये फूल समान हैं अर्थात् सुन्दर, सुखदायी व सुगन्धित हैं। इन कर्मेन्द्रियों द्वारा ही हम साधारणतः जीवन के सब कार्य करते हैं।

संक्षिप्त में यह कहा जा सकता है कि आन्तरिक सशक्तिकरण ही बाह्य सशक्तिकरण का आधार है।

आज का आध्यात्मिक सशक्तिकरण - कल की राज्य व्यवस्था का आधार

Today's Spiritual Empowerment — Tomorrow's Governance

कहा जाता है कि आने वाले कल का आज दर्पण है। यदि हम आज संगमयुग (कलयुग के अन्त और सतयुग के आदि) में अपना आध्यात्मिक सशक्तिकरण कर अपने को शक्तिशाली बना लेते हैं तो आने वाला कल (सतयुग) स्वतः ही हमारे लिए सुखदायी हो जायेगा। कलयुग के अन्त में अनेकताएं हैं- अनेक धर्म, अनेक भाषायें, अनेक कुल, अनेक राज्य, अनेक मतें, जिनके कारण ही आज विश्व में अनेक प्रकार के टकराव देखने को मिलते हैं। धर्म-भेद, भाषा-भेद, जाति-भेद आदि कई बार अनेक दुखों तथा परोक्ष-अपरोक्ष युद्ध के कारण बन जाते हैं। इसके विपरीत, सतयुग में श्री नारायण का एक छत्र राज्य होता है, एक धर्म, एक भाषा और एक मत होती है तथा समस्त विश्व में खुशहाली, समृद्धि और सुख-चैन की बांसुरी बजती रहती है। किन्तु विचार की बात है कि ऐसा सतयुगी स्वराज्य आयेगा कैसे?

इस कल्याणकारी संगमयुग पर परमपिता परमात्मा का अवतरण होता है और वे ही ईश्वरीय ज्ञान और सहज राजयोग के द्वारा नई सतयुगी सृष्टि की स्थापना करते हैं। वर्तमान समय हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, बौद्ध, जैन आदि जितने भी धर्म हैं सभी धर्म 'प्रेम' का मात्र पाठ पढ़ाते हैं परन्तु व्यवहारिक जीवन में धारणा कराने का यह कार्य परमात्मा ही करा पाते हैं। हृदय प्रेम और भावनाओं का प्रतीक माना जाता है और इस कारण ही चित्र में हृदय के अन्दर सभी मुख्य धर्मों के चिन्ह दिखाये गये हैं। यहाँ संगमयुग में प्रेम रूपी धर्म की धारणा ही सतयुग में एक आदि सनातन देवी देवता धर्म में परिवर्तित हो जाती है। इस भाव को चित्र में कमल के फूल से दर्शाया गया है। कमल पवित्रता का प्रतीक है और सतयुग में सभी मनुष्यात्माएं पवित्र होती हैं। पुनश्चः पवित्रता सर्व दिव्य गुणों की जननी है अतः सतयुग में मनुष्य सर्व गुण सम्पन्न होते हैं।

भाषा के द्वारा एक दूसरे के विचारों को जाना जाता है। साधारणतः जब किसी व्यक्ति से बात की जाती है तो उसका शारीरिक नाम, रूप, गुण, कर्तव्य, सम्बन्ध आदि बुद्धि में होता है। आध्यात्मिक सशक्तिकरण द्वारा आत्मा की भाषा का ज्ञान होता है, अर्थात् स्वयं को आत्मा समझ, दूसरों को भी आत्मा के रूप में देखना व उससे आत्मिक आधार पर व्यवहार करना। यहाँ संगमयुग में आत्मा की भाषा का व्यवहार, वहाँ सतयुग में आपसी व्यवहार की भाषा (देवनागरी भाषा) बन जाती है। इसी प्रकार परमात्मीय ज्ञान के आधार पर संगम पर किसी भी भेद भाव के बिना सभी के साथ एक उच्च कोटि का मानवीय व्यवहार मानवों को आपस में एक ईश्वरीय परिवार के रूप में बाँधता है। यही फिर आने वाले स्वर्णिम युग में एक दैवी कुल के रूप में परिणित हो जाता है।

इस शरीर में आत्मा राजा है और यह कर्मेन्द्रियाँ -आंख, नाक, कान, मुख, हाथ आदि उसकी प्रजा हैं। अभी संगमयुग में जितना व्यक्ति की आत्मा राजा का अपने शरीर की इन कर्मेन्द्रियों पर स्वाभाविक राज्य होता है, उतना ही सतयुगी विश्व में वह प्रेमपूर्वक सफल प्रशासन चला सकता है। इस प्रकार आज (संगमयुग) का आध्यात्मिक सशक्तिकरण, आने वाले कल (सतयुग) की राज्य व्यवस्था का आधार बन जाता है।

आज का आध्यात्मिक सशक्तिकरण - कल की राज्य व्यवस्था का आधार

अब दिलों की भाषा, प्रेम का धर्म और आत्मा का स्वयं पर शासन।
फिर होगा एक धर्म, एक भाषा, एक कुल और विश्व पर एक प्रशासन॥

जीवन में सोलह कलाओं द्वारा देव पद की प्राप्ति

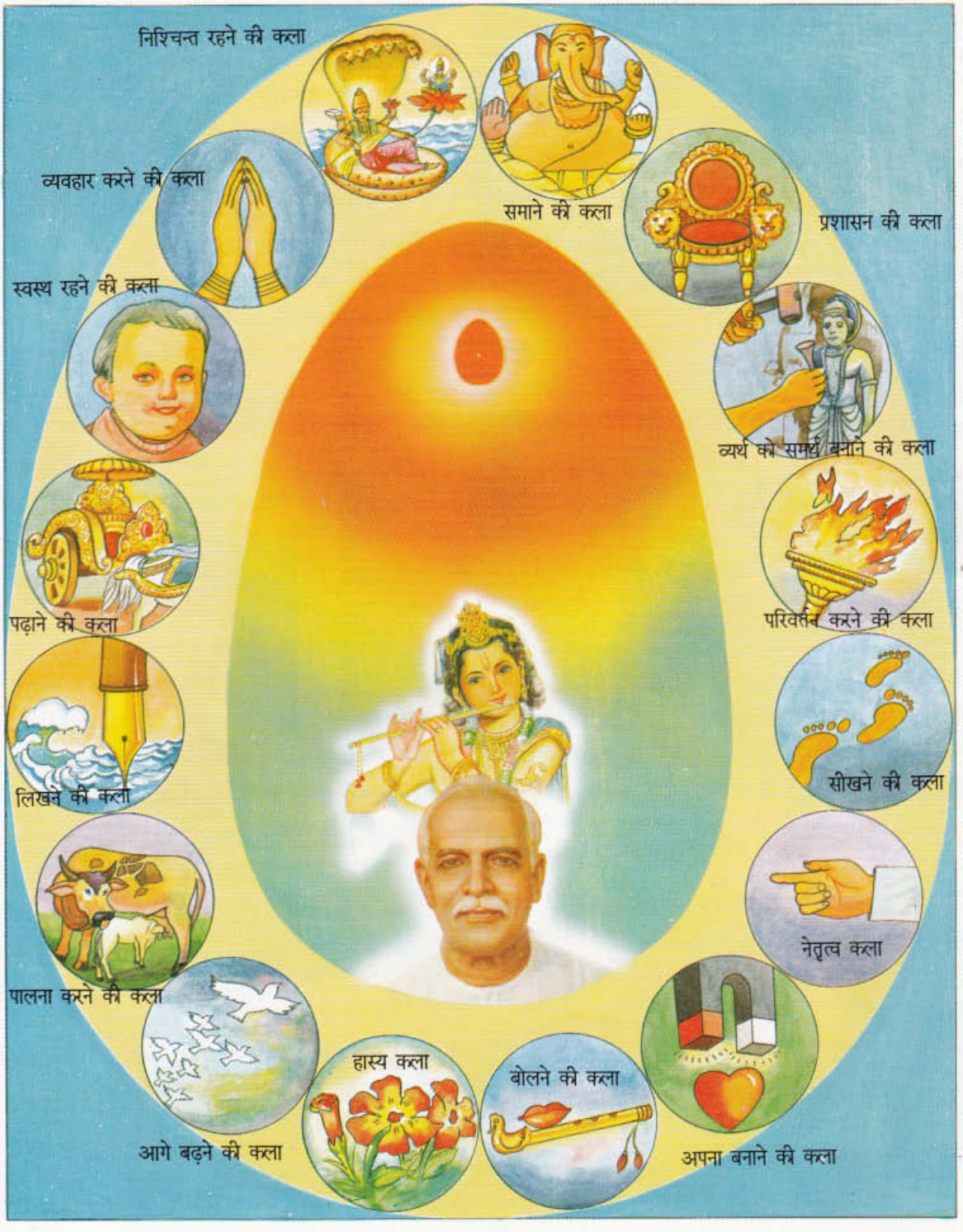

कलाओं का शृंगार, मानव जीवन को सजाता।
इनकी सुन्दरता से मनुष्य, देव पद को पाता॥

जीवन में सोलह कलाओं द्वारा देव पद की प्राप्ति
Deity Status Through Sixteen Celestial Degrees

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में चार विषयों को पढ़ाया जाता है - ज्ञान, योग, धारणा व सेवा। इन चारों का केन्द्र बिन्दु है इस ईश्वरीय विश्व- विद्यालय के साकार संस्थापक पिताश्री ब्रह्मा बाबा का जीवन वृत्त। अतः यदि हम ब्रह्मा बाबा की जीवन कहानी को अपने जीवन में उतारें तो शीघ्र ही सोलह कला सम्पूर्ण बन सकते हैं। ब्रह्मा बाबा के जीवन की विशेषताओं को निम्नलिखित 16 कलाओं के रूप में दर्शाया जा सकता है —

1- **निश्चिन्त रहने की कला** (Art of Relaxation) – इस निश्चय में रहने से कि "करन करावनहार परमात्मा है, हम तो निमित्त हैं" हम सदा निश्चिंत रह सकते हैं। बीती का चिन्तन न करें, बीमारी में भी यह समझकर संतुष्ट रहें कि यह कर्मों का हिसाब-किताब है, पूर्व निश्चित सृष्टि नाटक के प्रत्येक दृश्य को सामने रख हर स्थिति में एक रस रहें। सागर में शेष शैय्या पर विष्णु का चित्र निश्चिन्त रहने का ही प्रतीक है।

2 - **व्यवहार करने की कला** (Art of Dealing or Behaviour) – हमारा व्यवहार ऐसा हो जिसमें सर्व के प्रति सहज आदर, स्नेह, निस्वार्थ भावना व मधुरता भरी हो। ऐसा व्यक्ति सहज सबके हृदय को जीत कर उस पर राज्य करता रहता है। कहा जाता है कि सुन्दर वह है जिसका व्यवहार सुन्दर है (Handsome is that who handsome does)

3 - **स्वस्थ रहने की कला** (Art of keeping healthy) – स्वस्थ अर्थात्– स्व (आत्मा) + अस्थ (स्थिति), अर्थात् आत्मिक स्थिति में रहकर हर कर्म करते रहना ही स्वस्थता है। सदा अपने को बेगमपुर के बादशाह समझ खुश रहें क्योंकि खुशी जैसी खुराक नहीं है। स्वच्छ जल, ताजा (Fresh) भोजन व ताजी हवा अच्छे स्वास्थ्य में बहुत महत्त्व रखती है। बाबा कहते- स्वास्थ्य के लिए दवा के साथ-साथ सबकी दुआएँ भी लेते रहो। ड्रामा के गहन राज को समझकर सदा हर परिस्थिति में प्रसन्न रहना ही स्वस्थ रहने की कला है।

4 - **पढ़ाने की कला** (Art of Teaching) – आदि पिता ब्रह्मा बाबा अपनी चलन, स्नेहमयी रुहानी दृष्टि, वृत्ति व व्यवहार से सबको अपनत्व का पाठ पढ़ाते थे। पढ़ाई की कला का सार है प्रेमपूर्वक व्यवहार। संत कबीर दास ने भी मार्मिक शब्दों में कहा है–

"पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढ़ाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय॥"

यद्यपि इस शिक्षा में अनेक विषय हैं पर बाबा ऐसे पढ़ाते जो लगता था कि एक ही विषय पढ़ा रहे हैं और कहानी के तौर पर पढ़ा रहे हैं। विद्यार्थी और शिक्षक के बीच घनिष्टता होती थी। किसी को शिक्षा देनी होती तो अलग व्यक्तिगत रीति से देते थे और महिमा करनी होती तो सर्व के सम्मुख करते थे, जिससे उसका स्वाभिमान बना रहता था और वह स्वयं को बदल लेता था। श्रीकृष्ण का रथ में बैठ अर्जुन को शिक्षा देना

यहाँ दूसरों की सेवा करते-करते लायक बन जाते हैं। हरेक को बाबा ने उनकी योग्यता वा रुचि अनुसार काम देकर आगे बढ़ा दिया।

12– **सीखने की कला** (The Art of Learning)– सीखना अर्थात् जीवन में परिवर्तन। ब्रह्मा बाबा इतनी आयु होने के बावजूद भी सदा यही समझते कि में विद्यार्थी हूँ, इसी मनोवृत्ति ने उनको उच्चता के शिखर पर पहुँचा दिया। सीखने के लिए जिज्ञासा चाहिये। बाबा पढ़ाई के महत्त्व को बताते हुए कहते कि बच्चे! जिसको मुरली से प्यार है माना मुरलीधर से प्यार है, अतः मुरली (पढ़ाई) कभी भी नहीं छोड़ो। इसी तरह बाबा बूढ़ों को भी जब बच्चे-बच्चे कहते तो उनमें पढ़ाई के प्रति सतर्कता(Alertness) आ जाती थी।

13– **परिवर्तन करने की कला** (The Art of Transformation or Moulding)– बाबा कहते कि एक बार समझ लेने के बाद कि स्वधर्म क्या है, स्वलक्षण क्या है, इस अनुसार स्वयं को परिवर्तित करना ही मोल्ड होना है। ब्रह्मा बाबा के जीवन में यही परिवर्तन देखा गया। जिस दिन साक्षात्कार हुआ 'अहम् चतुर्भुज तत् त्वम्' बस, उसी दिन से परिवर्तन हो गया। तीव्र पुरुषार्थ का अर्थ ही है- तीव्र परिवर्तन, 'तुरत दान महापुण्य'। बाबा ने इस बात को अपने जीवन का महामंत्र बना लिया था।

14 - **व्यर्थ को समर्थ बनाने की कला** (The Art of Making Waste into Best)– लोग व्यर्थ (Waste) लोहे को, सोने को गलाकर नया रूप दे देते हैं। वैसे ही बाबा पुराने संस्कार, पुरानी आदतों को समाप्त कराकर अच्छी आदतें बना देते थे। उन्हें सदैव सारी पतित दुनिया को पावन बनाने का शुभ संकल्प रहता था। घर की कोई पुरानी स्थूल चीज हो उसे भी बाबा नया रूप देकर काम में आने लायक बना देते थे।

15- **प्रशासन कला** (The Art of Administration)– नई दुनिया की स्थापना करना, एक-एक के संस्कार को बदलना, कितना कठिन कार्य है। बड़े से बडा कलाकार या प्रशासक वह है जो थोड़े से साधन से बड़ा कार्य कर दिखाये। बाबा का सिद्धान्त था- कार्य शुरू करो साधन स्वतः जुटते जायेंगे। बाबा हर एक व्यक्ति को कोई न कोई कार्य का अवसर देते थे। बाबा का प्रशासन ऐसा उत्तम रहा जो यहाँ सभी स्वयं कार्य मांगते हैं, क्योंकि यहाँ कार्य को सेवा और सेवा को भविष्य प्राप्ति के आधार के रूप में देखते हैं। यहाँ कोई अधिकारी या मैनेजर नहीं, किसी का रौब नहीं। अतः इस प्रशासन में कोई बन्द अथवा अवकाश भी नहीं है। प्रतिदिन ही पढ़ाई की क्लास नियमित समय पर होती है।

16- **समाने की कला** (The Art of Absorbence)– बाबा के जीवन में देखा गया कि यदि विश्वास से कोई बच्चा अपनी बात बाबा को सुनाता था तो बाबा उसको सागर की तरह समा लेते थे, दूसरों तक नहीं पहुँचाते थे, इससे सभी खुले मन से अपनी बात बाबा को सुना देते थे। गणेशजी को बड़े उदर के कारण समाने की कला के प्रतीक के रूप में दिखाया जाता है।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण की प्रयोगशालाएं
Laboratories For Spiritual Empowerment

प्रकृति का यह नियम है कि संसार की प्रत्येक वस्तु, सभ्यता, संस्कृति, धर्म, संस्था आदि अपनी सतोप्रधान अवस्था से गिरते-गिरते तमोप्रधान अवस्था को प्राप्त करती हैं। प्रारम्भिक अवस्था में प्रत्येक धर्म में आध्यात्मिकता के कारण आन्तरिक शक्ति निहित होती है। उसके अनुयाईयों में भी त्याग, तपस्या, सेवा व सादगी होती है। परन्तु समय के साथ-साथ यह गुण कम होने लगते हैं और कलयुग अन्त तक तो आध्यात्मिक शक्ति लगभग समाप्त हो जाती है। मानवीय व आध्यात्मिक मूल्य प्रायः लोप हो जाते हैं। 'धर्म' केवल विश्वास का विषय रह जाता है तथा मन-वचन-कर्म से पवित्रता का लगभग पूर्णतः ह्रास हो जाता है। इस कारण न तो उनका अपनी कर्मेन्द्रियों पर नियत्रंण रहता है और न ही वे मानसिक एकाग्रता, आन्तरिक शान्ति व शक्ति की अनुभूति कर पाते हैं। अपने धर्म संस्थापकों द्वारा बताये गये नियमों व मर्यादाओं का भी वे पालन नहीं कर पाते हैं। वे अपने को 'माया' अथवा कमजोरियों से हारा हुआ अनुभव करते हैं तथा सोचते हैं कि केवल परमपिता परमात्मा अथवा उनके धर्म का पिता ही उन्हें 'माया' के इस जाल से निकाल सकते हैं। उनकी इस बात को ध्यान से विचार करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यद्यपि परमात्मा दिशा निर्देष देते हैं तथा मदद भी करते हैं परन्तु पुरुषार्थ हमें स्वयं ही करना है, तभी हम प्राप्तियों की खुशी व संतुष्टता की अनुभूति कर सकते हैं। यही पुरुषार्थ हमारे आध्यात्मिक सशक्तिकरण का है जिसके लिए स्वयं परमपिता परमात्मा ने कुछ प्रयोगशालाएं बनाई हैं। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की विभिन्न शाखाएं ही वास्तव में आध्यात्मिक सशक्तिकरण की प्रयोगशालाएं हैं, जहाँ पर मनुष्यात्माओं में आध्यात्मिक शक्ति भरकर उन्हें अपने मनोविकारों पर निश्चित रूप से विजय प्राप्त करना सिखाया जाता है। इसकी स्थापना स्वयं परमपिता परमात्मा ज्योतिर्बिन्दु शिव ने 1937 में सिन्ध (वर्तमान समय पाकिस्तान) में प्रजापिता ब्रह्मा (पूर्व का नाम दादा लेखराज) के साकार माध्यम द्वारा की थी। निराकार परमपिता परमात्मा ज्योतिर्बिन्दु शिव ने इनके तन में 'दिव्य प्रवेश' करके इन्हें एक अलौकिक नाम दिया- 'प्रजापिता ब्रह्मा'। उनके मुखार्विन्द द्वारा ज्ञान एवं योग की शिक्षा प्राप्त कर आध्यात्मिक नये जीवन को प्राप्त करने वाले ही 'ब्रह्माकुमार' और 'ब्रह्माकुमारी' कहलाए। भारत की स्वतंत्रता के पश्चात् सन् 1950-51 में ईश्वरीय विश्व विद्यालय का स्थानान्तरण माउन्ट आबू (राजस्थान) में हुआ। सन् 1969 में पिताश्री प्रजापिता ब्रह्मा बाबा अपनी सम्पूर्ण अवस्था को प्राप्त कर अव्यक्त हो गये। उनके पश्चात् इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य प्रशासिका बनीं-'राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी', जिनके कुशल नेतृत्व में अब भी नयी-नयी प्रयोगशालाएं (ईश्वरीय विश्व विद्यालय के केन्द्र) खुलती जा रही हैं। वर्तमान समय विश्व के पाँचों महाद्वीपों में व सम्पूर्ण भारत में इसके लगभग 5000 सेवाकेन्द्र हैं। सह मुख्य प्रशासिका के रूप में दादी जानकी जी सेवारत हैं।

चित्र में मुख्यालय (आबू) से लेकर विश्व के कुछ भागों में स्थित आध्यात्मिक सशक्तिकरण के लिए स्थापित प्रयोगशालाओं में से कुछ के चित्र दिये गये हैं।

आध्यात्मिक सशक्तिकरण की प्रयोगशालाएं

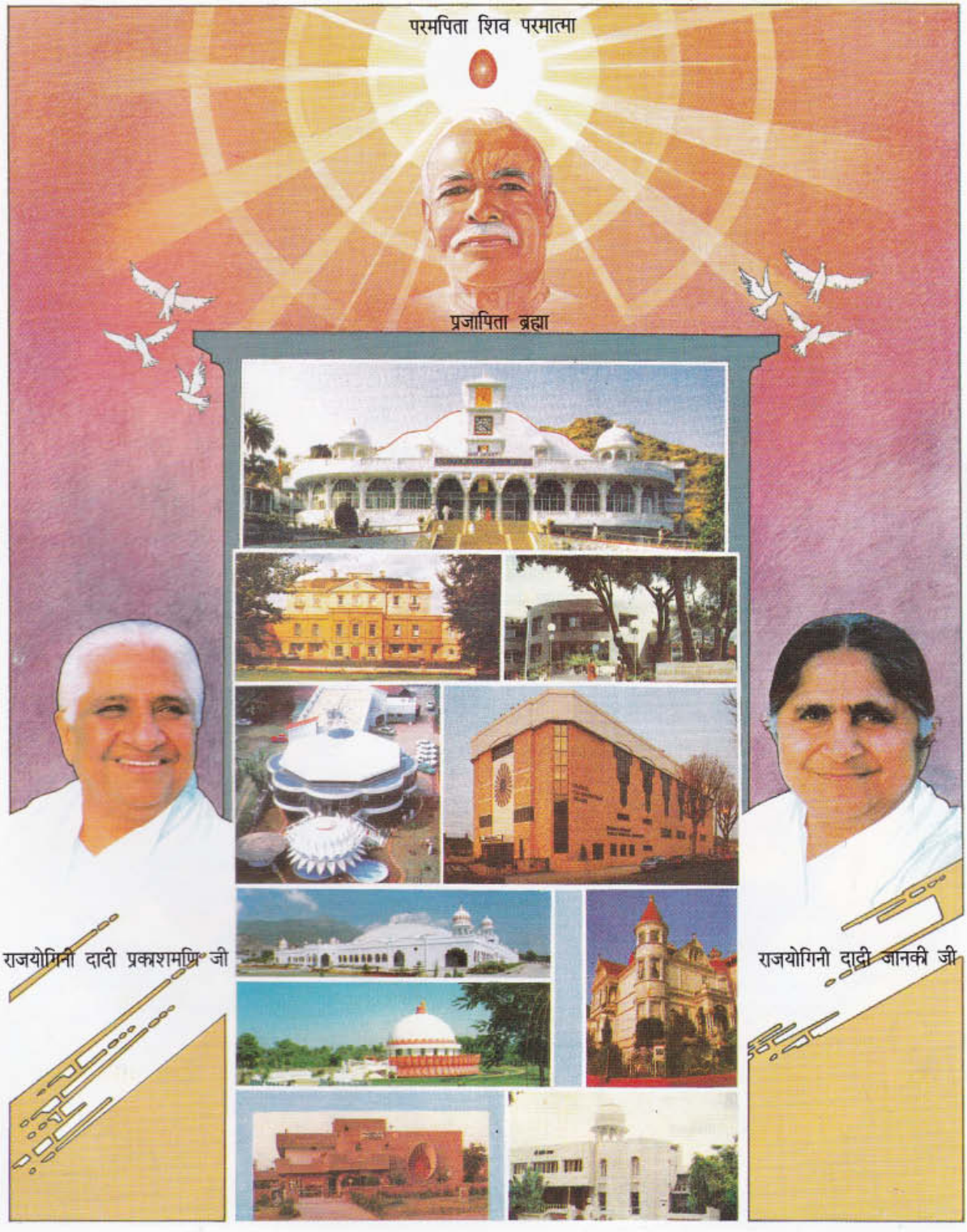

आध्यात्मिक सशक्तिकरण की प्रयोगशाला, हर दिशा, हर कोने में।
नहीं लगेगा वक्त अब, नये विश्व के होने में ॥

आध्यात्मिक सशक्तिकरण और परिवर्तन चक्र

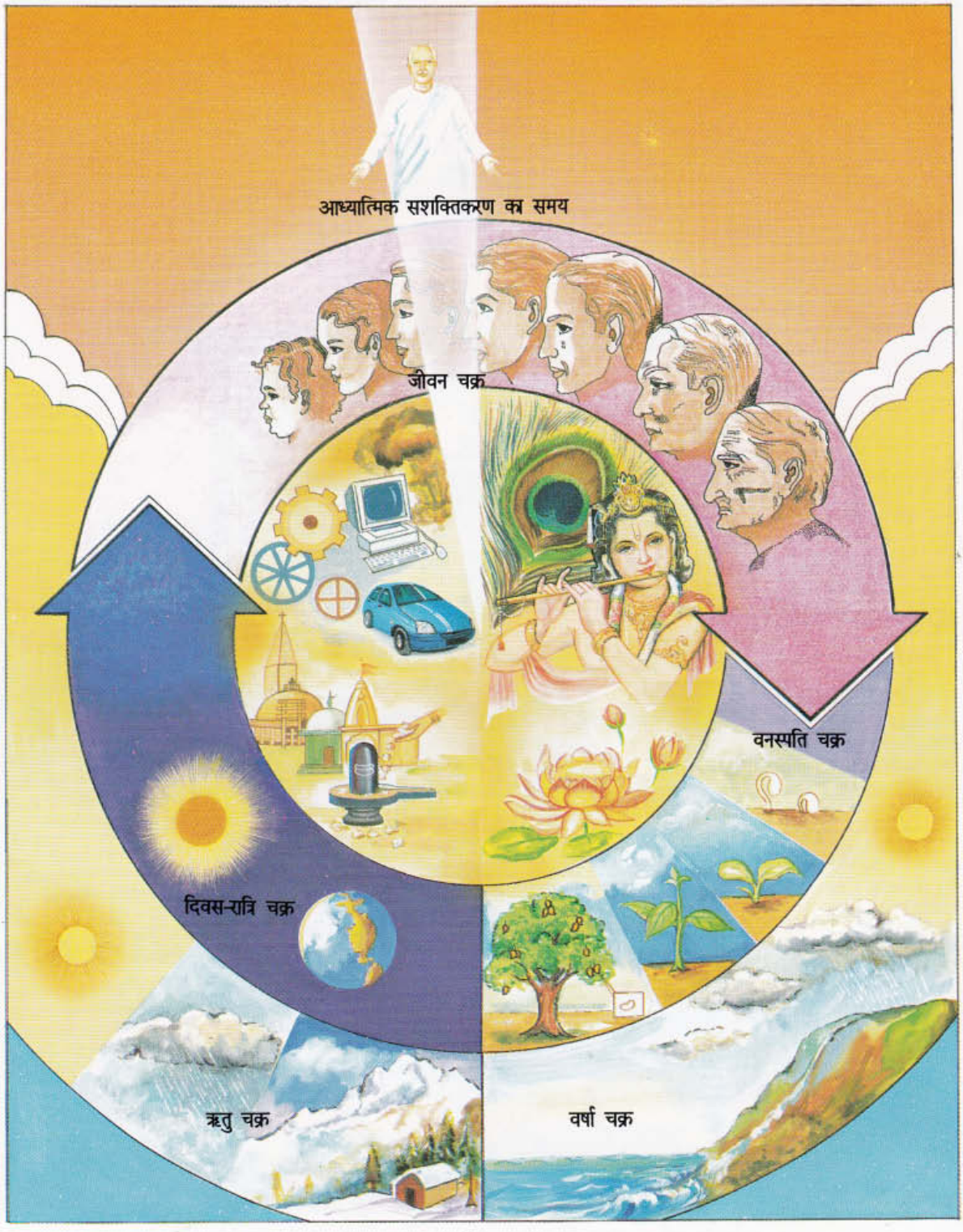

वृक्ष से बीज, फिर आते मौसम, दिन के बाद फिर रात।
परिवर्तन चक्र में फिर होगी, स्वर्णिम युग की शुरूआत॥

आध्यात्मिक सशक्तिकरण और परिवर्तन चक्र

Spiritual Empowerment And Cyclic Change

परिवर्तन संसार का नियम है, हर जड़-चेतन सत्ता परिवर्तनशील है। ध्यानपूर्वक देखने पर एक बात स्पष्ट होती है कि अधिकतर भौतिक व प्राकृतिक घटनाओं की चक्रीय क्रम में एवं निश्चित समय में हूबहू पुनरावृत्ति होती है। इस बात को चित्र के नीचे के भाग में दिखाया गया है।

सामान्यतः दिन-रात का 24 घंटे का चक्र होता है- दिन के बाद रात और रात के बाद दिन आता है। इसी प्रकार ऋतु-चक्र एक वर्ष में पूरा होता है और इसमें ग्रीष्म, वर्षा, शरद और बसन्त ऋतुएं आती हैं जिनकी हर वर्ष पुनरावृत्ति होती रहती है। वर्षा चक्र में सूर्य की गर्मी से समुद्र का जल वाष्पीकरण द्वारा बादल का रूप ले लेता है। ये बादल पर्वतों व मैदानों में वर्षा के रूप में बरसते हैं और वह पानी नदियों, नालों व झरनों के रूप में बहता हुआ पुनः वापिस आकर समुद्र में मिल जाता है। इस प्रकार वर्षा चक्र की भी पुनरावृत्ति होती रहती है। वनस्पति चक्र में भी पहले बीज से अंकुर निकलता है और यह अंकुर पहले पौधे में और पौधा फिर वृक्ष के रूप में परिवर्तित हो जाता है। वृक्ष अपने नष्ट होने से पहले नये बीज पैदा करता है, जिससे पुनः नया वृक्ष बनता है और इस प्रकार यह चक्र सदा चलता रहता है। इसी प्रकार मनुष्य का जीवन-चक्र भी चलता है। आत्मा, पहले माता के गर्भ में शरीर धारण करती है फिर क्रमशः नवजात शिशु, बालक, किशोर, युवा, प्रौढ़ एवं वृद्धावस्था को प्राप्त करती हुई इस शरीर को त्याग देती है तथा दूसरा शरीर धारण करके पुनः इस मानव जीवन-चक्र में आती रहती है। इसी प्रकार यह सृष्टि चक्र भी चलता रहता है जिसकी हर पाँच हजार वर्ष बाद हूबहू पुनरावृत्ति होती है। प्रथम ढ़ाई हजार वर्ष (सतयुग-त्रेतायुग) में एक धर्म, एक राज्य, एक भाषा और एक मत होने के कारण सभी के जीवन में सुख चैन की बांसुरी बजती रहती है, जो कि सृष्टि चक्र के दायें भाग में श्रीकृष्ण द्वारा उसे बजाने के रूप में दिखाया गया है। इसके बाद अगले ढ़ाई हजार वर्ष (द्वापर-कलयुग) में अनेक मत-मतान्तरों के कारण द्वैत, कलह-क्लेश, लड़ाई-झगड़ा तथा दुख पैदा होता है। कलयुग अन्त में विज्ञान अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है तथा सुख के अनेक साधनों के साथ-साथ आणविक हथियारों का निर्माण करने व प्रदूषण को भी फैलाने में निमित्त बनता है। इसके कारण अनेक प्रकार के रोग-शोक, दुख-अशान्ति बढ़ती जाती हैं। सभी मनुष्य देहाभिमानी, विकारी और पतित बन जाते हैं, जिससे उनका आहार-व्यवहार, दृष्टि-वृत्ति, मन, वचन और कर्म आदि तमोगुणी हो जाते हैं। ऐसे समय में, जो कि धर्म की अति ग्लानि का समय होता है, इस सृष्टि नाटक के रचयिता तथा निर्देशक परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्मा के तन में स्वयं अवतरित होते हैं और ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग का प्रशिक्षण देकर मनुष्यों की मार्ग प्रदर्शना करते हैं तथा उन्हें मुक्ति और जीवन मुक्ति का ईश्वरीय जन्म सिद्ध अधिकार देते हैं। इस समय को पुरुषोत्तम संगम युग (कलयुग के अंत और सतयुग के आदि का समय) कहा जाता है, यही आध्यात्मिक सशक्तिकरण का समय है। वर्तमान में यह समय चल रहा है और इसके बाद पुनः स्वर्णिम युग आयेगा। उस स्वर्णिम युग में चलने के वही अधिकारी होंगे जो इस समय अपने को आध्यात्मिक सशक्तिकरण की युक्ति द्वारा सशक्त करेंगे। यह आध्यात्मिक सशक्तिकरण का छोटा सा युग ही स्वर्णिम युग को लाता है।

धरती पर स्वर्ग
Heaven On Earth

जब कोई व्यक्ति शरीर छोड़ता है तो प्रायः कहा जाता है कि वह स्वर्ग सिधार गया। दूसरे शब्दों में इसका भावार्थ निकाला जा सकता है कि वह पहले नरक में था और मृत्यु के बाद स्वर्ग पहुँच गया। इस आधि (मानसिक क्लेश), व्याधि (शरीरिक कष्ट) और उपाधि (अन्य समस्याएं) वाली दुनिया से वह मुक्त हो गया और इस प्रकार स्वर्ग की ओर कूच कर गया।

अब परमपिता परमात्मा निराकार ज्योतिर्बिन्दु शिव, जो कि त्रिकालदर्शी हैं तथा सृष्टि के आदि- मध्य-अन्त के ज्ञाता हैं, उन्होंने बताया है कि इस सृष्टि के अतिरिक्त स्वर्ग व नरक कोई अलग-अलग दुनियाँ नहीं हैं। यह सृष्टि ही जब सतोप्रधान होती है और मनुष्यात्माएं सर्वगुण सम्पन्न, 16 कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी, सम्पूर्ण अहिंसक और मर्यादा पुरुषोत्तम होती हैं, तब इसी सृष्टि को स्वर्ग, बहिष्त, अल्लाह का बगीचा या पैराडाइज (Paradise) कहा जाता है। सर्वशक्तिवान ईश्वर ऐसी ही सृष्टि का निर्माण किया करते हैं। ऐसा सुखमय संसार ढ़ाई हजार वर्ष तक चलता है जहाँ सर्व प्रकार का सुख, शान्ति, आनन्द व प्रेम दैनिक जीवन में होता है। मनुष्यात्माओं ने ऐसे सुख-शान्ति युक्त संसार की अनुभूति अनेक बार की है। ऐसे सुखमय संसार की दिनचर्या के कुछ पहलुओं का चित्रण सामने वाले चित्र में किया गया है। चित्र के बाएँ भाग में ऊपर की तरफ दिखाया गया है कि रात्रि की भरपूर सुखद निद्रा के पश्चात् एक मधुर प्राकृतिक संगीत के साथ स्वतः नींद खुलती है। पवन द्वारा वृक्षों के पत्ते खड़खड़ाने और पक्षियों की चहचहाहट एक ऐसी सुरीली ध्वनि पैदा करते हैं मानो मधुर संगीत उत्पन्न हो रहा हो। सुगन्धित जल से स्नान, शारीरिक शृंगार, भोजन में अनेकानेक व्यंजन, अनेक कलाओं जैसे नृत्य कला, संगीत कला, चित्र कला आदि की शिक्षा दिनचर्या का एक सामान्य अंग होते हैं, इसके साथ ही राजविद्या की शिक्षा भी मिलती है। खेल-कूद, रास-विलास आदि जीवन में प्रसन्नता के अनेक रंग घोलते हैं। राज-दरबार में सारा राज्य-कारोबार सम्पूर्ण रीति से तनावमुक्त होता है और स्वतः ही चलता हुआ प्रतीत होता है। जीवन में किसी भी कार्य में मेहनत की कोई भी अनुभूति नहीं होती। इसी को ही जीवन-मुक्त अवस्था कहा जाता है। यही बैकुण्ठ है जहाँ पर सम्पूर्ण सुख-शान्ति सम्पन्न श्री लक्ष्मी व श्री नारायण का राज्य होता है। वहाँ 'इच्छा मात्रम् अविद्या' होती है तथा किसी की भी अकाले मृत्यु नहीं होती। हर व्यक्ति की काया सदा निरोगी रहती है और सर्व प्रकार के खजाने भरपूर रहते हैं। इसलिए ही मनुष्य स्वर्ग अथवा बैकुण्ठ को अभी तक भी याद करते हैं।

ऐसे संसार के पुनर्निर्माण का कार्य वर्तमान समय स्वयं परमपिता परमात्मा द्वारा किया जा रहा है और परमात्मा शिव सृष्टि की सर्व आत्माओं को ऐसे संसार का अधिकारी बनाने के लिए आह्वान कर रहे हैं। आइये, हम सभी मिलकर इस पुनीत कार्य में उनके सहयोगी बनें।

धरती पर स्वर्ग

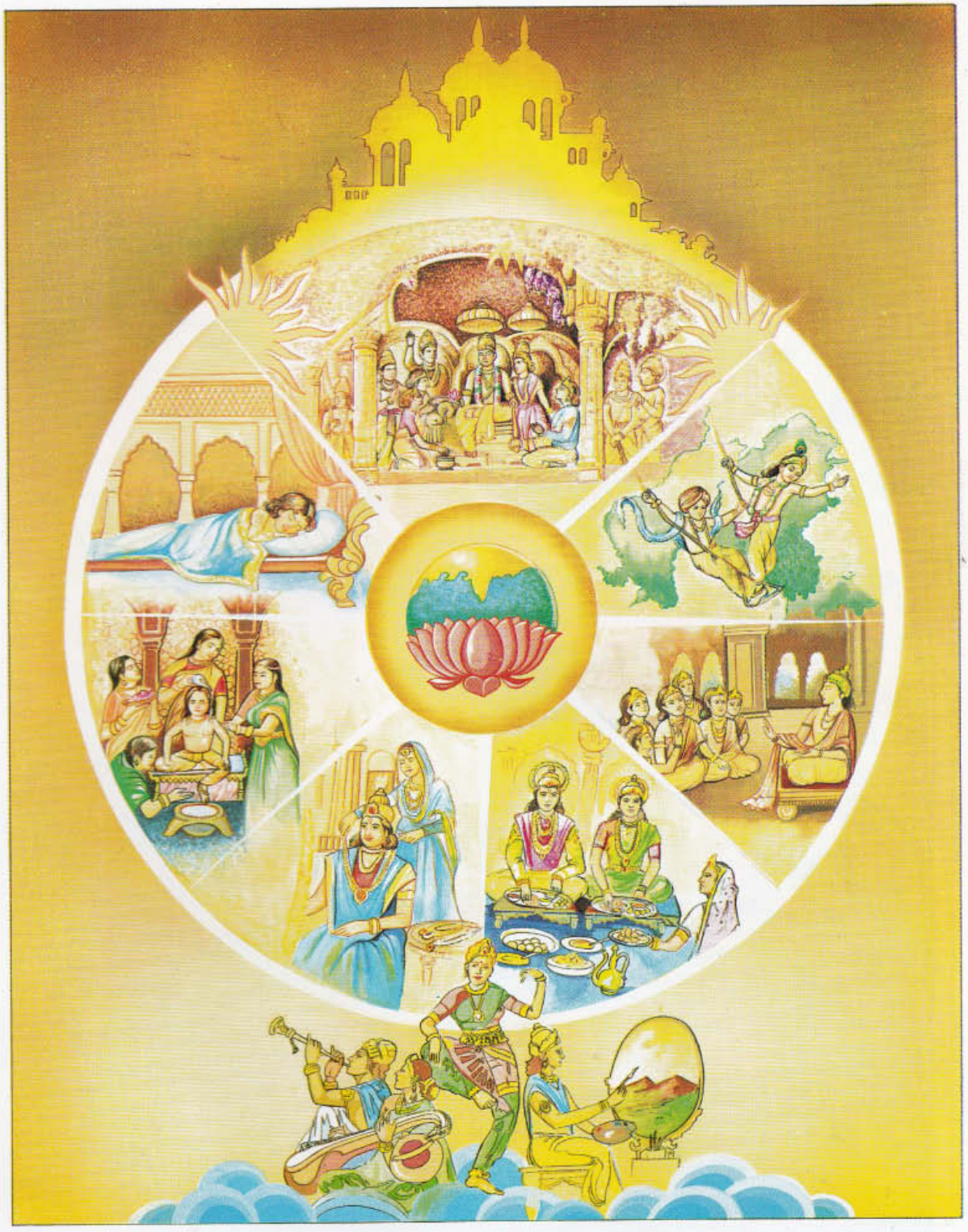

सुख की बगिया, महकता हुआ उपवन होगा। हर दिन आनन्द भरा, स्वस्थ सदा तन-मन होगा॥
जीवन सदा बसंत समान, खुशियों का सावन होगा। अद्‌भुत आश्चर्य, स्वर्ग हमारा मनभावन होगा॥

प्रकृति और मानव प्रकृति में सुसंवादिता

जल में खुशबू, वायु में साज, सूर्य और आकाश से सुन्दर उपवन होगा।
प्रकृति और मानव प्रकृति की सुसंवादिता से, धरती पर मधुबन होगा॥

प्रकृति और मानव प्रकृति में सुसंवादिता
Harmony Between Nature And Human Nature

'प्रकृति' (Nature) शब्द की व्याख्या दो प्रकार से की जा सकती है, प्रथम- पाँच तत्वों से मिलकर बनी हुई प्रकृति तथा दूसरा, मनुष्य की प्रकृति अर्थात् मानव स्वभाव। दोनों प्रकृतियों का आपस में गहरा सम्बन्ध है। चित्र के ऊपर के भाग में एक हाथ में प्रकृति के पाँच तत्वों अर्थात् जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी व आकाश को दिखाया गया है। विस्मृत इतिहास का एक समय ऐसा भी था (सतयुग-स्वर्णिम युग) जब प्रकृति के यह पाँचों तत्व सतोप्रधान थे और विश्व में सम्पूर्ण सुख, शान्ति होने के कारण यह सृष्टि 'फूलों का बगीचा' कहलाती थी। उस समय मानव प्रकृति **(Human Nature)** भी सतोप्रधान थी तथा सभी मनुष्य मात्र सदा स्वस्थ, सर्व गुण सम्पन्न, **16** कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी, मर्यादा पुरुषोत्त्म व सम्पूर्ण अहिंसक थे, तभी तो उन्हें देवता कहा जाता है। उस समय पशु पक्षी आदि भी सम्पूर्ण अहिंसक थे, जिनका गायन अभी भी होता है कि वहाँ शेर और गाय एक घाट पर पानी पिया करते थे। उस स्वर्णिम युग में प्रकृति के इन पाँचों तत्वों व मानव प्रकृति में गहरी सुसंवादिता (Harmony) थी। दोनों ही प्रकृतियां अपनी मर्यादा में रहती थीं तथा सर्व को सदा सुख प्रदान करती थीं। उस समय बाढ़, सूखा, भूचाल, अति गर्मी, अति सर्दी, अनावृष्टि, अतिवृष्टि, तूफान आदि कुछ भी नहीं होते थे तथा यह पाँचो ही तत्व सदा सुख देने वाले होते थे, जिसके कारण आज तक भी भारतीय संस्कृति में इन तत्वों को देवी-देवताओं के रूप में याद किया जाता है, जैसे कि अग्नि देवता (सूर्य देवता), वायु देवता, जल देवता आदि-आदि।

उस स्वर्णिम युग में किसी भी प्रकार का प्रदूषण नहीं था। न तो पर्यावरण प्रदूषण और न ही मानसिक प्रदूषण। स्वच्छ आकाश में उड़ते हुए पक्षी तथा पवन द्वारा वृक्षों के हिलते हुए पत्ते ऐसी ध्वनि पैदा करते थे जैसे कि संगीत के किसी साज़ से निकलने वाला मधुर संगीत हो। सौर ऊर्जा का बहुत व्यापक उपयोग होता था तथा इसी ऊर्जा से पुष्पक विमान आदि अधिकतर चलते थे। प्राकृतिक झरनों से निकले हुए शीतल सुगंधित औषधियुक्त पौष्टिक जल में स्नान करके हरेक अपने को सदा ही तरोताज़ा व स्वस्थ अनुभव करता था। प्रकृति की इन्द्रधनुषी सुन्दर छटा तथा सदा बसन्त बहारी मौसम सभी को रास, खेल-कूद आदि की प्रेरणा देता रहता था। संक्षिप्त में सर्व का जीवन स्वयं ही सदा एक उत्सव समान था जिससे जीवन में खुशहाली तथा समृद्धि अनुभव होती रहती थी। ऐसी सतयुगी पावन सृष्टि अब पुनः आने वाली है।

मुख पृष्ठ से सम्बन्धित

मुख पृष्ठ के इस चित्र में दर्शाया गया है कि कैसे एक योगी जब आत्म चिन्तन और परमात्म चिन्तन में बैठता है तो उसके लिए इस दुनिया की हरेक परिस्थिति बदल जाती है। उसके बैठने का आसन, कमल-आसन बन जाता है। जैसे कमल कीचड़ में रहते हुए भी कीचड़ व गन्दे पानी से ऊपर न्यारा व सर्व का प्यारा होता है, वैसे ही योगी भी इस दुनिया की हरेक बुराई से मुक्त, सर्व लगाव-झुकाव से न्यारा और सर्व का प्यारा होता है। उसे सर्व आध्यात्मिक शक्तियाँ प्राप्त होने लगती हैं, जिससे वह फरिश्ता स्वरुप का अनुभव करने लगता है। जीवन में उमंग- उत्साह रुपी पंखों के द्वारा वह सदा उड़ती कला की स्थिति में रहता है तथा अतीन्द्रिय सुख व खुशी के झूले में झूलता रहता है। प्राप्त हुए गुण व शक्तियों को वह चारों ओर प्रसारित करने लगता है। चित्र में ये गुण व शक्तियाँ अनेक रंगो के रूप में दिखाई गई हैं।

इस प्रकार धीरे-धीरे वह सतोप्रधान स्थिति को प्राप्त करता है, उसकी आत्मा कंचन (स्वर्ण) समान बन जाती है तथा वह सदा अपने को ईश्वर की छत्रछाया के नीचे अनुभव करता है। ये ही संस्कार उसे भविष्य में आने वाली स्वर्णिम सृष्टि (सतयुग) में छत्र (उच्च पद) का अधिकारी बनाते हैं। इस तथ्य को चित्र में स्वर्णिम छत्र के द्वारा दर्शाया गया है।

वर्तमान समय मानव मात्र को "आध्यात्मिक सशक्तिकरण" के द्वारा मनोविकारों पर विजय प्राप्त कराने का महान कार्य परमपिता परमात्मा 'शिव' प्रजापिता ब्रह्मा के अव्यक्त सम्पूर्ण स्वरूप द्वारा करा रहे हैं। आइये ! हम सब मिलकर सृष्टि परिवर्तन के इस विशिष्ट कार्य में ईश्वर के सहयोगी बनें। ईश्वरीय महावाक्य है- "अभी नहीं तो कभी नहीं।"

लेखक : ब्र. कु. मोहन सिंघल, ज्ञान सरोवर, आबू पर्वत (राज.)
चित्रकार : ब्र. कु. किरण एवं भरत, सोलापुर (महाराष्ट्र)
प्रकाशक : प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय, आबू पर्वत (राज.)
मुद्रक : ओम् शान्ति प्रेस, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड (राज.)